हिन्दी - विभाग

डॉ॰ कविता कुमारी सिंह

P.G , II sem

विषय — हिन्दी आलोचना की आधुनिक प्रवृत्तियाँ एवं विकास :—

मनुष्य का चेतना-लोक निरन्तर विकासमान है। एक समय था जब मनुष्य आस्थावादी था और जीवन व जगत को आस्तिक्यबुद्धि से देखता है, किन्तु धीरे-धीरे उसकी आस्थावादी प्रवृत्तियाँ में परिवर्तन आता गया। विज्ञान और भौतिक दुनियाँ जैसे-जैसे अपवाद होती गई, वैसे-वैसे प्रगति, प्रयोग और उपलब्धियों का नया दौर प्रारम्भ हुआ। हमा-
मान जगत पाश्चात्य सम्पर्क, वैज्ञानिक प्रभाव को विकसित सभ्यता के रंगों के प्रसार के कारण बुद्धि का विकास हुआ। इस स्थिति में न केवल हम
जीवन प्रभावित हुआ, अपितु साहित्य भी प्रभा
होता चला गया। साहित्य की विस्तृत प

में काव्य के साथ-साथ सापेक्ष गद्य का विस्तार और विकास हुआ। जीवन में प्रचलित मूल्यों, विश्वासों और मान्यताओं को नये चश्मे से देखा जाने लगा। कहने का तात्पर्य है कि मनुष्य के मानस में सम्यक निरीक्षण की प्रवृत्ति विकसित हुई। यहीं से आलोचना का कार्य प्रारम्भ हुआ।

आलोचना का अर्थ 'सम्यक निरीक्षण' है। मानवीय वृत्तियों अथवा संवेदनाओं की तरह ही आलोचना की प्रवृत्ति भी चिरकाल से चली आ रही है। प्रश्न यह है कि आलोचना क्या है? स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि आलोचना शब्द संस्कृत की 'लुच' धातु से बना है। 'लुच' का अर्थ है देखना। 'लुच्' में 'ल्युट' प्रत्यय जोड़कर लोचना शब्द बनता है और 'आङ्' उपसर्ग के योग से आलोचना शब्द निर्मित होता है। इस प्रकार आलोचना शब्द का अर्थ हुआ कि किसी वस्तु को या किसी पदार्थ को विशेष मर्यादित या नियंत्रित दृष्टि से देखना। कई बार यह संभव है कि दृष्टि के नियंत्रित और संतुलित होने पर भी आलोचक निजी राग-द्वेषों से

प्रभावित होकर आलोचना को मात्र गुण-कथन या मात्र दोष-दर्शन का ही पर्याय समझ ले। इसी स्थिति में बचने के उद्देश्य से ही आलोचना में 'सम्' उपसर्ग के नियोजन की प्रक्रिया चली पड़ी। 'सम' उपसर्ग के योग से आलोचना समालोचना बन जाती है। वस्तुतः आलोचना या समालोचना का अर्थ है कि संतुलित और नियंत्रित दृष्टि से किसी वस्तु के गुणावगुणों का कथन।

परिभाषाएँ :— 'रिचर्ड्स' ने आलोचना को परिभाषित करते हुए मूल्य-निर्धारण को ही प्रमुख विशेषता मानते हैं, चाहे वह साहित्य-क्षेत्र में की गयी हो या ललित कला के क्षेत्र में। इसका स्वरूप निर्णय में निहित है। 'ड्राइडन' ने भी आलोचना में 'रिचर्ड्स की भाँति मूल्यांकन को ही महत्व प्रदान किया है, किन्तु 'एडीसन' व 'कालरिज' दोनों ने आलोचना का अर्थ सौन्दर्योद्घाटन और साहित्य-निर्माण के नियमों का निश्चितिकरण माना है। 'वर्सफोल्ड' के अनुसार, आलोचना कला और साहित्य के क्षेत्र में निर्णय की स्थापना है।

हिन्दी के समीक्षकों में 'डॉ० श्यामसुन्दर दास' आलोचना के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि 'साहित्य-क्षेत्र में ग्रन्थ को पढ़कर उसके गुणों और दोषों का विवेचन करना और उसके संबंध में अपना मत प्रकट करना आलोचना कहलाता है।" 'डॉ० गुलाबराय' ने लिखा है — "आलोचना का मुख्य उद्देश्य कवि की कृति का सभी दृष्टिकोणों से आस्वाद कर पाठकों को उस प्रकार के आस्वाद में सहायता देना तथा उनकी रुचि को परिमार्जित करना एवं साहित्य की गतिविधि निर्धारित करने में योग देना है" 'डॉ० नगेन्द्र' ने आलोचना को मात्र गुण-दोष का बखान न मानकर ललित साहित्य का अंग मानते हुए साहित्यिक अभिव्यंजना कहा है

इस प्रकार आचार्यों की परिभाषा तथा आलोचना के स्वरूप पर विचार करने के पश्चात् हम कह सकते हैं कि आलोचना साहित्य में 'सत्साहित्य के निर्माण को प्रोत्साहन तथा असत् साहित्य के निर्माण का जहाँ एक ओर निराकरण करती है वहीं साहित्य और पाठकों के संबंध को भाव पर प्रतिष्ठित करती है।'